International Journal of Information Movement Vol.5 Issue V (September 2020)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 1-7

हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित सामाजिक गतिशीलता का चित्रण

रेणु
शोधार्थी :
हिन्दी – विभाग
एन.आई.आई.एल.एम. विश्वविद्यालय
कैथल

डॉ0 जोगी राम
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी – विभाग
एन.आई.आई.एल.एम. विश्वविद्यालय
कैथल

सारांश साहित्य किसी समाज की समस्त संवेदनाओं का कोष कहा जाता है क्योंकि साहित्य में ही युग विशेष की सामाजिक मान्यताएँ, सांस्कृतिक प्रतिमान तथा जीवन के मूल्य प्रतिफलित होते हैं। साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज के स्वरूप को अभिव्यक्ति प्रदान करता हुआ युगीन आकांक्षाओं के अनुकूल परिवर्तित समाज निर्मित करने के लिए आह्वान करता है एवं समाज साहित्यकार को सम्पूर्ण परिवेश एवं जीवन की आवश्यक सुविधाएँ प्रदान कर इस योग्य बनाता है कि वह समाज की वाणी को मूर्तरूप प्रदान कर सके। इस प्रकार समाज साहित्यकार का एवं प्रकारांतर से साहित्य का नियामक तथा साहित्य सामाजिकता का संवाहक होता है। विश्व के प्रत्येक समाज में सामाजिक संगठन की प्रक्रिया निरन्तर प्रवाहमान रहती है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए सतत् संघर्ष करते रहते हैं। युगीन साहित्य उस समाज के संघर्ष को वाणी एवं नूतन दिशा प्रदान करता है। हिन्दी के आंचलिक उपन्यास साहित्य में हिन्दी भाषी अंचलों के सामाजिक संघर्ष को पूर्ण परिवेश के साथ अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

मुख्य शब्द : मूर्तरूप, नियामक, संवाहक, प्रतिफलित, मृतिका, पाणिग्रहण, मार्मिक, अभिशाप, यजुर्वेद

1.0 परिचय : सम्प्रति, साहित्य की अभिव्यक्ति के सभी स्वरूपों में उपन्यास सर्वाधिक समृद्ध विद्या है। इसके प्रमुखतः दो कारण है। सर्वप्रथम आज का साहित्यकार पहले की अपेक्षा कहीं अधिक तार्किक एवं वैज्ञानिक पद्धति पर विचार करता है। दूसरे उपन्यास ऐसी विधा है जिसके माध्यम से उपन्यासकार सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व धार्मिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को पूर्ण विस्तार के साथ अभिव्यक्ति प्रदान कर सकता है। इसलिए साहित्य की अन्य विधाओं की समकक्षता में उपन्यास की विधा में समसामयिक समाज का चित्रण अपेक्षाकृत व्यापक स्तर पर मिलता है। वस्तुतः आंचलिक उपन्यासरूपी प्रसाद का आधार वह सुनिश्चित अंचल अथवा जनजाति का समाज ही होता है जिसकी पृष्ठभूमि पर उपन्यास विरचित है। आंचलिक उपन्यासकार निश्चित एवं सीमित अंचल के सम्पूर्ण जीवन को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए उस समाज के सम्पूर्ण परिवेश के नियामक तत्वों से अपनी औपन्यासिक कृति का कथा–पार्श्व बुनता है और यह तभी सम्भव हो सकता है जब उपन्यासकार में उस विशिष्ट अंचल के नागरिकों के जीवन को समझने, जानने एवं उसके लिए अपनी सम्पूर्ण क्षमताओं को समर्पित कर देने की अटूट आकाँक्षा हो। अंचल के मुनष्य एवं मृतिका से स्नेह किए बिना यह असम्भव है। सम्भवतः यह भावना ही 'मैला आँचल', 'परती' : परिकथा' तथा आंचलिक उपन्यास की मूलभूत जननी है।

भारतीय ग्रामीण समाज वैदिक काल में वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित था। इस व्यवस्था के अनुसार समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र चार वर्ण होते हैं। यह चारों अपने गुण कर्म के अनुसार अपने कार्य करते हैं। यजुर्वेद में समाज के इन चार अंगों की तुलना एक विशालकाय पुरूष के समान की गयी है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र इस समाज रूपी मानव के क्रमशः मस्ष्कि, भुजा, उदर एवं चरण हैं।

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद, बाहुराजव्यः कृतः।
उरू तदस्य भद्वैस्यः, पदभ्यां शूद्रौ जायत।।

इस मन्त्र से स्पष्ट है कि उस समय वर्ण – व्यवस्था का आधार गुण–कर्म था।

'वरूण के बेटे' में कोसी नदी के अँचल में बसे मलाही–गोढ़ियारी गाँव के मछुआ समाज के जीवन की समस्याओं का चित्रण है। यह मछुआ समाज सम्पन्न और विपन्न दो वर्गों में बंटा है। सम्पन्न वर्ग विपन्न वर्ग का शोषण करता है। ठण्ड में पानी में घुसने और बोझ उठाने जैसे कष्टसाध्य कार्य विपन्न वर्ग को करने पड़ते हैं परन्तु आय का दसवां हिस्सा ही उसे मिल पाता है। विपन्न परिवार छोटे से घर में अटा पड़ा रहता है और कथरी–गुदड़ी के टुकड़ों से अपना तन ढंक कर किसी प्रकार ठण्ड का मौसम व्यतीत करता है। प्रमुख धंधा मछली पकड़ना होने पर भी

बच्चे भर–पेट मछली नहीं खा पाते। मछली पकड़ने का ढंग अवैज्ञानिक तथा अनियोजित है यद्यपि देश स्वतन्त्र हो चुका है और जमींदारी–उन्मूलन हो चुका है फिर भी जमीदार मछुवारों से किसी न किसी बहाने जल–कर वसूल करते हैं।

जन–जातीय समाज में विवाह सम्बन्धी नाना प्रकार की प्रथाएँ प्रचलित हैं जिनका वर्णन आंचलिक उपन्यासों में मिलता है। 'गोंड' जन–जाति में विवाह सम्बन्धी 'दूध लौटाने की प्रथा' प्रचलित है। एक लड़के का विवाह जिस वंश में होता है उसे उस वंश के लड़के से अपनी लड़की का विवाह करना होता है। जनजातिमूलक आंचलिक उपन्यास 'जंगल के फूल में' इस प्रथा के आधार पर मुन्दरी के मामा का लड़का सन्तू सदैव मुन्दरी से विवाह करने के लिए कहता है। मुन्दरी अपने प्रेमी हिरमे से कहती है – 'तुझ पर तो मैं जान देती हूँ रे, पर दईमारा सन्तू हाथ धोकर पीछे पड़ा है। रोज मेरी देहरी छूता है और बीर के कान भरता है। बीर है सो उस पर जान देता है। जान क्यों न दे, दोनों चिलम भाई जो ठहरे। दम–भाई सो सगा–भाई। + + + पर मुसीबत यो है हिरमे कि तापे कहता है कि तु आन गाँव का है। सन्तू मेरे मामा का लड़का है और हमेशा दूध लौटाने की बात करता है। कहता है कि मुन्दरी को लेकर रहूँगा।'

'हो' जनजाति में वधू मूल्य देने की विवाह संबंधी प्रथा पाई जाती है। इस प्रथा के अनुसार विवाह के समय वर पक्ष को वधू प्राप्त करने के लिए धन देना होता है। आंचलिक उपन्यास 'वन के मन में' लुकना मेजों से प्रेम करता है परन्तु मेंजो के माता–पिता द्वारा मांगे जाने वाले धन को नहीं दे पाएगा इससे निराश हो जाता है जिनकी इस तथ्य को लुकना को समझाते हुए कहती है – ''जिनकी झुंझला उठी ..... हूँ क्या ? तुम मेंजों पर अपने को बहा भी देना चाहो तब भी तुम्हारा मनोरथ पूरा न होगा। तुम जानते हो मेंजो के माँ–बाप कितना गोनों माँगेंगे ? एक दूसरा तुम्हारे ही जैसा मतिभ्रम जवान मेंजो से ब्याह करने की बात लेकर गया था, लेकिन जब उसने गोनों की रकम और बैल का नम्बर सुना तो इस तरह पीछे घूमकर देखने लगा जैसे अपनी धुम ढूंढ रहा हो।'' यहाँ पर 'हो' जनजाति में वधू–मूल्य निर्धारन करने के लिए प्रचलित पद्धति का एक उदाहरण प्रस्तुत है –

वर पक्ष से बरेगा 'हो' ने प्रचलित रीति के अनुसार कहा –

दः आ सकम तेले रिंगा तना टुकु तना
दः आ सकम असि लगिड़, किरि केजा लगिड़
अपे औलाले हुजुआकना।
एमा लैभाचि पे बानो।

अर्थात् पानी पत्ती के लिए हम लोगों को बड़ी
तकलीफ हो रही है।

पानी पत्ती खरीदने के लिए हम लोग
आप के घर आए हुए हैं।
आप देंगे या नहीं।

तब वधू–पक्ष से प्रमुख व्यक्ति ने कहा –

सिरमा सकम चि सुवा सकम
सक्म जांडिगे विति जांडिगे गोनों हो बाबा।
सुकोय चि पे बानो।

अर्थात् – (पौधे की) उपर की पत्ती या नीचे की पत्ती (आप मांगते हैं) – यानि छोटी लड़की या बड़ी लड़की ? जैसी पत्ती होगी वैसा ही गोनों लगेगा। पसन्द है या नहीं ?

''मैला आँचल'' में जिस समाज को प्रस्तुत किया गया है रेणु जी ने उसकी विकृतियों को भी उभारा है। गरीबी और मजदूरी के फलस्वरूप अनेक प्रकार के वर्जित यौन सम्बन्ध यहाँ पनप रहे हैं। फुलिया, रधिया, रमपियरिया आदि सभी यौन शोषण के शिकार हैं। धन–बल और बाहुबल से बाबू टोले के लोगों ने तन्त्रिमा टोले की औरतों से अवैध सम्बन्ध बना रखे हैं। रेणु जी ने ऐसे यौन संबंधों की चर्चा इस प्रकार की है – ''तहसीलदार साहब की बेटी शाम से ही आधी रात तक डाकघर बाबू के घर में बैठी रहती है। तहसीलदार हरगौरी सिंह खास मौसेरी बहन से फंसा हुआ है। बालदेव कोठारिन से लटपटा गए हैं। कालीचरन ने स्कूल की मास्टरनी को अपने घर में रख लिया है।''

'रतिनाथ की चाची' मिथिला के जीवन में व्याप्त सामाजिक समस्याओं का प्रभावशाली ढंग से उद्घाटन करता है। मिथिला के ब्राह्मणों की सनक है कुलीनता। जो जितना कुलीन होता है उसकी दरिद्रता उतनी ही बड़ी हुआ करती है। उच्च कुल में कन्या ब्याहने की सनक के सामने अन्य बातों की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाता। इसका अभिशाप रतिनाथ की चाची ने जीवन भर भोगा। उसके पति वैद्यनाथ झा कुलीनता की दृष्टि से ही जरा बड़े थे अन्यथा महा दरिद्र, दमा के रोगी और प्रकृति के सुस्त। इसी कुलीनता के महत्व ने मिथिला में 'बिकौआ' प्रथा को जन्म दिया। कुलीन ब्राह्मण अपनी कुलीनता बेच–बेचकर अपनी जीविका चलाते थे। एक–एक व्यक्ति बाईस–बाईस तक शादियां करता था। उनका जीवन ससुरालों में ही कट जाता था। उनकी इज्जत भी काफी होती थी। आदरपूर्वक आंमत्रित करके तब लोग उनसे अपनी कन्या का पाणिग्रहण करवाते थे। रतिनाथ के नाना की दस विमाताएँ थी। जयनाथ के परदादा ने इक्कीस शादियाँ की थी। इस बहुपत्नीत्व ने

जहाँ स्त्रियों की स्थिति को दयनीय बनाया था वहीं समाज में अनैतिकता का भी प्रचार किया था।

'कब तक पुकारूँ' में नटों के जीवन की समस्याओं को उद्घाटित किया गया है। नट खानाबदोश होते हैं और जरायम पेशा भी। नैतिकता के इनमें कोई बंधन नहीं होते। शराब पीना, चोरी करना और जुआ खेलना उनके लिए नैतिकता के अंतर्गत ही आता है। इन गुणों का न होना उनके समाज में अस्वाभाविक ही माना जाता है। सोनो सुखराम के संबंध में कहती है –

''पर मुझे उसमें जवानी का हड़कम्प ही नहीं दिखाई देता। वह शराब पीता है तो पीने में हिचक जाता है। किसी की लड़की के साथ एक दिन भी नहीं पाया गया। ..... वह गाली नहीं देता जो मर्दानगी की निशानी है, चोरी वह नहीं करता, जुआ वह नहीं खेलता।''

इन नटों में पति–पत्नी में आपस में प्रेम होता है परन्तु नये संबंधों के लिए स्वतन्त्र होते हैं। एक साथ कई से सम्बन्ध भी चल सकते हैं। ऐसे भी पति होते हैं जो परिवार की चिन्ता नहीं करते, शराब और जुए में अपना सर्वस्व खो देते हैं। उनकी स्त्रियाँ खेल करतब दिखाकर ऊँची जातिवालों से नाजायज सम्बन्ध जोड़ती है तथा चोरी करती है। पुलिस इन पर अत्याचार करती है। सुखराम भी जानता है कि :

''सिपाही में बड़ी ताकत होती है। वह राजा का आदमी होता है। वह सबसे घूस लेता है। गाँव के लोग उससे डरते हैं। वह जिधर जाता है उधर ही नट डर कर छिप जाते हैं। ..... चाहे जब चाहे जिस नटनी कंजरिया को पकड़ कर ले जाते हैं।'' नटों के मन में सिपाहियों का बहुत भय होता है क्योंकि वे उन्हें थाने में पकड़ ले जाते हैं। वहाँ पर चोर कह देते हैं और बेंत से पीटते हैं। कभी–कभी गुड़ के पानी के छीटें दे दिए जाते हैं जिससे चीटें लग जाते हैं। दरोगा जी को जरूरत पड़ती है इनमें से किसी को बुला लेते और सिपाहियों के जरिये समझा–बुझाकर बनियों की चोरी करवा देते। माल बंट जाता।''

आर्थिक असामनता ने समाज में उच्च और निम्न वर्गों को जन्म दिया। व्यक्ति किसी न किसी दल से संबद्ध होकर इकाई न रहकर वर्ग हो गया। उच्च और निम्न वर्ग के बीच व्यापक विषमता ने निम्न वर्ग को उच्च वर्ग के विरूद्ध संघर्षरत किया। रेणु ने अपने उपन्यासों में वर्ग द्वंद्व का चित्रण व्यापक रूप में किया है। ग्रामीण जीवन में शोषण एवं तद्जन्य निर्धनता और बेबसी का अत्यन्त यथार्थ अंकन रेणु के उपन्यासों में हुआ है। इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रेमचंद के बाद पहली बार भारतीय ग्रामों की आत्मा अपनी पूरी सच्चाई के साथ उनके उपन्यासों में स्पष्ट हुई है। मैला आंचल का मेरीगांज गाँव अनन्य जड़ताओं का शिकार एवं अभावों का विपुल भंडार

है। डा0 प्रशान्त इस गाँव में आकर बड़ा आश्चर्यचकित होता है। जब वस्त्रों के अभाव में निमोनिया के रोगी को पुआल में सिर छुपाए हुए देखता है।

'परती परिकथा' का निम्न वर्ग भी इस निर्धनता और बेकारी से जूझ रहा है। परानपुर की जनता प्रयत्नशील है अपनी गरीबी को दूर करने के लिए इसका चित्र लेखक ने बड़े ही मार्मिक ढंग से खींचा है, 'बच्चे मर गए हाय रे। बीबी मर गई हाय रे। उजड़ी दुनिया हाय रे .....। मजदूर हो गए। घर से दूर हो गए। वर्ष महीना एक कर, खून पसीना एक कर। बिखरी ताकत जोड़कर, बर्तन–पत्थर तोड़कर। इस डायन को साधेगें। उजड़े को बसाना है। इस प्रकार से ग्रामीण मजदूरों की कार्यशीलता का यह दृश्य उनके कठिन श्रम लेखा–जोखा प्रस्तुत कर, उनके अभावों, दुख–दर्द व विभिन्न विसंगतियों को उजागर कर उनकी उस जीवंत शक्ति की कथा कहता है जो ज्ञात होकर भी अज्ञात है।

'मैला आँचल' के अंतर्गत सामाजिक परिप्रेक्ष्य पर आए परिवर्तनों ने ग्रामीण जीवन की मूल्यवत्ता को हिलाकर रख दिया है। नैतिक मूल्य टूट रहे हैं। झूठी गवाहियों के बल पर कुर्की हो रही है। भारतीय गांवों में थोड़े–बहुत परिवर्तन के साथ सांमती व्यवस्था एवं संस्कार कमोवेश आज भी जीवित है। इस सांमती व्यवस्था ने अनेक सामाजिक बुराइयों को जन्म दिया है विलासिता और कामुकता के क्षेत्र में तो सर्वथा नवीन मानदंड ही प्रस्तुत किए हैं। इसके लिए सांमतो ने उनके विवाह किए और नैतिक–अनैतिक अनेक साधनों से कामुकता में परितृप्ति में लग रहे। अवैध यौन–संबंध स्थापित किए। भ्रूण हत्याओं, आत्महत्याओं एवं अन्याय रूपों में अपराधों की श्रृंखला का जन्म हुआ। रेणु के उपन्यासों में ये अवैध यौन–संबंध और विकृतियाँ, विविध रंगों से उभरी है।

निष्कर्ष :

हिन्दी के आंचलिक उपन्यास साहित्यमें चित्रित भारतीय ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था के प्रमुख नियामक तत्व वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था, पारिवारिक व्यवस्था एवं नारी की सामाजिक स्थिति के परपंरागत तथा परिवर्तित स्वरूप के अध्ययन के उपरान्त सम्पूर्ण ग्रामीण समाज में अवतरित परिवर्तन की प्रक्रिया पर दृष्टिपात करना भी अनिवार्य है। ग्रामीण जनता के परम्परागत जन्म, जाति, लिंग सम्बन्धी विषमता के दृष्टिकोण में समानता की धारणा स्थान ग्रहण कर रही है जो भारतीय ग्रामीण जनता के प्रगति पथ पर अग्रसर होने की घोतक है।

2.0 सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. हिन्दी के आंचलिक उपन्यास : सामाजिक व सांस्कृतिक संदर्भ – डॉ0 विमल शंकर नागर – पेज न0 13, 14, 17
2. यजुर्वेद अध्याय–पुरूषसूक्त – पेज न0 31

3. हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्प–विधि, डॉ0 आदर्श सक्सेना – पेज न0 149
4. उपरिवत
5. हिन्दी के आंचलिक उपन्यास : सामाजिक व सांस्कृतिक संदर्भ – डॉ0 विमल शंकर नागर – पेज न0 199, 200
6. प्रतियोगिता साहित्य सीरीज – डॉ0 अशोक तिवारी – पेज न0 712
7. 'मैला आंचल, में ग्रामीण जीवन का यथार्थ और समाजवाद चेतना – कँवलजीत कौर
8. हिन्दी के आंचलिक उपन्यास – डॉ0 विमल शंकर नागर – पेज न0 71, 162, 163